आचार्य आर्यभट

डा० धनञ्जय वासुदेव द्विवेदी

सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,

डा० श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय, राँची

आर्यभट का जन्म शक 398 (ई०सन् 476) में हुआ था। आर्यभट ने आर्यभटीयम् नामक ग्रन्थ में जन्म समय को लेकर जो जानकारी दी है है वह आर्याछन्द् में निबद्ध है-

षष्ट्यब्दानां षष्टिर्यदा व्यतीतास्त्रयश्च युगपादाः।

त्र्यधिका विंशतिरब्दास्तदेह मम जन्मनोऽतीताः।।

इस श्लोक का स्पष्ट अर्थ यह है-आर्यभट कहते हैं कि जब तीन युग अर्थात् सतयुग, त्रेतायुग एवं द्वापर युग बीत गए, पुनः कलियुग के साठ गुणे साठ अर्थात् 3600 वर्ष बीतने लगे तब मैं 23 वर्ष का था।

भारतीय ज्योतिषयों की मान्यता है कि कलियुग के प्रारम्भ के 3179 वर्ष बाद शककाल का आरम्भ हुआ। 3179+421=3600। इस प्रकार शक संवत् 421 में आर्यभट 23 वर्ष के थे। शक वर्ष में 78 जोड़ने पर ईस्वी सन् का वर्ष मिलता है, अतः आर्यभट 499 ई० में 23 वर्ष के थे। 499-23=476 ई०। अर्थात् 476 ई० में आर्यभट का जन्म हुआ था।

आर्यभट का जन्म समय तो निर्विवाद है किन्तु जन्म स्थान को लेकर मतान्तर अवश्य है। आर्यभटीयम् में कुसकुसपुर का उल्लेख करते हुए आचार्य ने लिखा है-"कुसुमपुरेऽभ्यर्चितं ज्ञानम्"। इस कथन के आधार पर कुछ लोग इनका जन्मस्थान कुसुमपुर (वर्तमान पटना) मानते हैं। कुछ लोगों का कथन है कि इनका जन्म दक्षिण में केरल और कर्नाटक की सीमा पर कुसुमपुर नामक स्थान पर हुआ है। वे प्राचीन भारत के एक महान ज्योतिषविद् और गणितज्ञ थे। इन्होंने आर्यभटीय ग्रंथ की रचना की जिसमें ज्योतिषशास्त्र के अनेक सिद्धांतों का प्रतिपादन है। कहा जाता है कि यह ज्योतिषशास्त्र का पहला उपलब्ध पौरुषेय ग्रन्थ है, इसका अर्थ केवल इतना ही है कि आर्यभट से पूर्व जितने ज्योतिर्विद् हुए, वे सभी ऋषि थे। ऋषियों की रचना को भारतीय परम्परा में अपौरुषेय कहा जाता है।

उपलब्ध प्रमाणों के आधार पर ज्ञात होता है कि ज्योतिषशास्त्र का अस्तित्व आर्यभट के पूर्व भी विकसित रूप में था किन्तु वेदांग काल के पश्चात् एक अन्तराल दिखाई देता है जिसमें किसी महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ की रचना उपलब्ध नहीं होती। इस लम्बे अन्तराल को भंग करते हुए आचार्य आर्यभट ने ज्योतिष के क्षेत्र में क्रान्तिकारी कार्य कर अपना एक स्वतन्त्र सम्प्रदाय स्थापित कर दिया।

आचार्य आर्यभट की लघुकाय रचना आर्यभटीयम् के 121 पद्यों में ही समस्त ज्योतिष के सिद्धान्तों का प्रतिपादन कर दिया है, जो अपने आप में एक उदाहरण है। ये कुशल गणितज्ञ एवं खगोलज्ञ होने के साथ-साथ अत्यन्त निर्भीक थे। इनकी अद्भुत प्रतिभा के कारण इन्हें सूर्य का अवतार माना जाता है। आज भी इनकी असन्दिग्ध उपलब्धियाँ अनुसन्धान की दृष्टि से अद्वितीय मानी जाती है। गणित और खगोल उन्हें हस्तामलकवत् हो चुका था। पूर्ववर्ती अनेक आचार्यों ने पृथिवी पर दिन-रात्रि के परिवर्तन का कारण सूर्यभ्रमण को ही माना था किन्तु आर्यभट ने इस भ्रम का निवारण करते हुए पृथिवी के भ्रमण को कारण माना। इन्होंने पृथिवी की दैनन्दिन गति (अक्षभ्रमण) की घोषणा कर सम्पूर्ण ज्योतिषजगत् को चमत्कृत कर दिया। इस प्रकार आर्यभट ने भूचलन के सिद्धान्त का रहस्य ज्ञात कर लिया था। उस काल के वैज्ञानिक जगत् के लिए यह एक महत्त्वपूर्ण घटना थी। साथ ही इस प्रकार की घोषणा एक अदम्य साहस और निर्भीकता की परिचायक भी थी। इस महत्त्वपूर्ण रहस्योद्घाटन का श्रेय एकमात्र आचार्य आर्यभट को ही जाता है। आर्यभट ने किसी भी पूर्ववर्ती सिद्धान्त को यथावत स्वीकार नहीं किया। इन्होंने स्वयं वेध कर जो उचित परिणाम प्राप्त किया उसी को प्रमाण माना। अपने आर्यभटीयम् नामक महत्वपूर्ण ज्योतिष ग्रन्थ में उन्होंने वर्गमूल, घनमूल, समान्तर श्रेणी तथा विभिन्न प्रकार के समीकरणों का वर्णन किया है। खगोल-विज्ञान विषयक सिद्धान्त तथा इसके लिये यन्त्रों का भी निरूपण किया आज के वैज्ञानिकों को भी चमत्कृत करता है। आर्यभट ने अपने इस लघुकाय ग्रन्थ में क्रान्तिकारी अवधारणाएँ उपस्थापित की हैं। यह गणित और खगोल विज्ञान का एक संग्रह है, जिसे भारतीय गणितीय साहित्य में बड़े पैमाने पर उद्धृत किया गया है और जो आधुनिक समय में भी अस्तित्व में है।

इनकी सर्वप्रमुख कृति आर्यभटीयम् चार भागों में विभक्त है-

1. गीतिकापाद (16 पद्य)- गीतिकापाद में ग्रहों मे महायुगीन भ्रमण, ब्राह्मदिवस मान, आकाशकक्षा का विस्तार, सूर्य-चन्द्र और पृथिवी का योजन व्यास, मन्दोच्च एवं शीघ्रोच्चों का परिचय आदि विषय प्रतिपादित हैं। यहाँ एक ही पद्य में सूर्य, चन्द्रमा, पृथिवी, मंगल, गुरु, बृहस्पति आदि के युगीन भगणों की संख्या पठित कर दी गई है। यहाँ सर्वाधिक ध्यान देने की बात है कि पृथिवी की भगण संख्या देकर आर्यभट ने स्पष्ट कर दिया कि पृथिवी भी चक्रभ्रमण करती है।
2. गणितपाद (33 पद्य)- गणितपाद में दशगुणोत्तर संख्याओं से लेकर कुट्टक तक की गणित का वर्णन किया गया है। बीच वर्ग, वर्गमूल, श्रेढी गणित, त्रैराशिक, घन-घनमूल, त्रिभुज-वृत्त और गोल का क्षेत्रफल, व्यास-परिधि सम्बन्ध (दशमलव के चार अंकों तक, जो पाई के मान से सूक्ष्म है), समीकरण, व्यस्तविधि के साथ-साथ शंकु की छाया द्वारा ऊँचाई और कर्ण का आनयन आदि अनेक गणितीय विषयों का प्रतिपादन किया है।
3. कालक्रियापाद (25 पद्य)- कालक्रियापाद में ज्योतिष के सैद्धान्तिक विषयों का विस्तृत विवेचन किया गया है। इसमें कालमान प्रमुख है। यहाँ एक कल्प का प्रमाण 1008 युग माना गया है जबकि अन्य आचार्यों ने 1000 महायुगों का एक कल्प स्वीकार किया है।
4. गोलपाद (50 पद्य)- गोलपाद में गोलीय विषयों का निरूपण किया गया है। इसमें विषुवसम्पात, ग्रहों के पात, भूभ्रमण मार्ग, देशान्तरसाधन, ग्रहों के उदयास्त एवं कालांश, लग्नसाधन, ग्रहणगणित, दृक्कर्म, नति तथा ग्रहयुति की चर्चा है।

इस प्रकार एक लघुकाय ग्रन्थ में अंकगणित, बीजगणित, रेखागणित-इन तीनों प्रकार की गणित के साथ-साथ समस्त सैद्धान्तिक विषयों का जिस प्रकार सारगर्भित विवेचन किया है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। यही कारण है कि आर्यभटीयम् के प्रकाश में आने से अनेक सैद्धान्तिक तथा ऐतिहासिक भ्रान्तियों का निराकरण हो गया।

आर्यभट के समय सबसे बड़ी समस्या अङ्कों के सन्दर्भ में थी। अंकों को प्रदर्शित करने का कोई सरल ढंग नहीं था। इसीलिए आर्यभट ने अंकों को व्यक्त करने के लिए एक नई परम्परा का ही आविष्कार कर डाला। इसके माध्यम से संख्या के बड़े से बड़े मान को सरलता से प्रकट किया जा सकता है। एक ही पद्य में आचार्य आर्यभट ने अङ्कों की प्रक्रिया को निर्धारित कर दिया-

वर्गाक्षराणि वर्गेऽवर्गेऽवर्गाक्षराणि कात् ङ्मौ यः।

खद्विनवके स्वरा नव वर्गेऽवर्गे नवान्त्यवर्गे वा।।

अर्थात् वर्ग के अक्षरों क, ख, ग, घ, ङ; च, छ, ज, झ, ञ; ट, ठ, ड, ढ, ण; त, थ, द, ध, न, और प, फ, ब, भ, म को वर्ग के स्थान में एक से अयुत तथा 'विषम' स्थान में रखकर संख्या जाननी चाहिए। इसी प्रकार अवर्ग में अवर्ग के अक्षर को समझना चाहिए। यकारादि (य,र, ल, व, श, ष, स, ह) अ वर्ग के स्थान में दशसहस्र, लक्ष, आदि को सम स्थान में रखें। ककार से लेकर संख्या जाननी चाहिए अर्थात् क से 1, ख से 2, ग से 3 इत्यादि म से 25, इस प्रकार म पर्यन्त क्रमशः 25 संख्या होगी। 'ङ' और 'म'- इन दोनों की संख्या का योग 'य' की संख्या है। प्रथम स्थान में 'य' 30 का बोधक, द्वितीय स्थान में 3 का, इसी प्रकार 'र' 40 का बोधक और द्वितीय स्थान में 4 का बोधक है। दकारादि को भी इसी प्रकार जानना चाहिए। यहाँ ककारादि में जो अकारादि स्वर संयुक्त हो, तो वे संख्या प्रदर्शक न होकर स्थान प्रदर्शक होते हैं। अ, इ, उ, ए, ऐ, ओ, औ, ऋ, ऌ ये नव स्वर हैं-जो 18 संख्या स्थानों में नौ स्वर किस प्रकार रखे जा सकते हैं। वर्गस्थान में नौ स्वर क्रम से प्रयुक्त होते हैं। उसी प्रकार अवर्ग स्थान में भी वही नव स्वर है। इसी प्रकार औरों को भी जानना चाहिए।प्रथम स्वरयुक्त यकारादि द्वारा संख्या कहने पर उसको पहले अवर्ग स्थान में और द्वितीय स्वर युक्त को द्वितीय अवर्ग स्थान में रखनी चाहिए।

स्वर और वर्गाक्षर तथा स्वर और अवर्गाक्षर मिलकर कुल 18 संख्या स्थानों को प्रकट करते हैं, जो निम्नलिखित उदाहरणों से स्पष्ट है-

वर्गाक्षर और उनकी संख्याएं

क्=1, ख्=2, ग्=3, घ्=4, ङ्=5

च्=6, छ्=7, ज्=8, झ्=9, ञ्=10

ट्=11, ठ्=12, ड्=13, ढ्=14, ण्=15

त्=16, थ्= 17, द्=18, ध्=19, न्=20

प्=21, फ्=22, ब्=23, भ्=24, म्=25

अवर्गाक्षरों की संख्याएं

य्=30, र्=40, ल्=50, व्=60

श्=70, ष्=80, स्=90, ह्=100

स्वरों की संख्याएं

अ=1, इ=100, उ=$(100)^2$, ऋ=$(100)^3$, ऌ= $(100)^4$, ए=$(100)^5$, ऐ=$(100)^6$, ओ=$(100)^7$, औ=$(100)^8$

वर्गाक्षर और स्वरों के योग से संख्याएं

क्+अ=क= 1

क्+इ=कि=100

क्+उ=कु= $(100)^2$ = 10000

क्+ऋ=कृ=$(100)^3$ = 1000000इत्यादि

ख्+अ=ख=2

ख्+इ=खि=2 (100)=200

ख्+उ=खु=2 $(100)^2$=2X$(100)^2$ =20000इत्यादि

अवर्गाक्षरों और स्वरों के योग से संख्याएं

य्+अ=य=30

य्+ऋ=यृ=3 $(100)^3$ = 3000000 इत्यादि

इन्हीं नियमों से आर्यभट ने बड़ी से बड़ी संख्याओं का प्रयोग किया है।

आर्यभट की परम्परा का सम्मान उनके समकालीन आचार्य ब्रह्मगुप्त ने भी किया है।

गणित के क्षेत्र में आर्यभट द्वारा प्रतिपादित वर्गमूल तथा घनमूल की पद्धति आज भी प्रचलित है। व्यास और परिधि के सम्बन्ध का मान आर्यभट द्वारा साधित ही सूक्ष्मतम माना जाता है, जो सूक्ष्मता हेतु दशमलव के चार अंकों तक ग्रहण किया जाता है। ज्यासाधन भी आर्यभट की अद्भुत देन है।

आर्यभट प्रतिपादित महत्त्वपूर्ण गणतीय सिद्धान्त इस प्रकार हैं-

1. जिस चतुर्भुज क्षेत्र की चारों भुजाएं समान हों और चारों कोण भी परस्पर तुल्य हों एवं दोनों कर्ण परस्पर समान हों, उसे 'समचतुरश्र' क्षेत्र कहते हैं। ऐसे 'समचतुरश्र क्षेत्र का नाम 'वर्गक्षेत्र' भी है और इसके फल का नाम 'वर्गक्षेत्रफल' होता है। समान दो संख्याओं के परस्पर गुणन को संवर्ग कहते हैं-

   वर्गः समचतुरश्रः फलं च सदृशद्वयस्य संवर्गः।

2. समान तीन संख्याओं के पारस्परिक गुणनफल को 'घन' कहते हैं एवं द्वादशास्त्र अर्थात् बारह किनारों वाल ठोस, जिसका सभी कोण समतुल्य हो, तो वह भी घन कहलाता है। उसे घनक्षेत्र भी कहा जाता है-

   सदृशत्रयसंवर्गो घनस्तथा द्वादशाश्रिः स्यात्।।

3. समवृत्त क्षेत्र के परिधि के आधे को व्यास के आधे भाग से गुणा करने पर गुणनफल क्षेत्रफल होता है-

   समपरिणाहस्यार्धं विष्कम्भार्धहतमेव वृत्तफलम्।

4. परिधि के छठे भाग की दो राशियों की जो जीवा (ज्या), वह व्यास के आधे के बराबर होती है-

   परिधेः षड्भागज्या विष्कम्भार्धेन सा तुल्या।।

5. दो अयुत अर्थात् 20000 परिमित व्यास की आसन्न परिधि का परिमाण 62832 है अर्थात् 1 : 3.1416 ये गुणोत्तर हुए। इसी प्रकार त्रैराशिक द्वारा इससे न्यूनाधिक परिमित व्यास के आसन्न परिधि का परिणाम समझना चाहिए-

चतुरधिकं शतमष्टगुणं द्वाषष्टिस्तथा सहस्राणाम्।

अयुतद्वयविष्कम्भस्यासननो वृत्तपरिणाहः।।

6. भुजा के वर्ग और कोटि के वर्ग के योग के तुल्य कर्ण का वर्ग होता है-

यश्चैव भुजावर्गः कोटीवर्गश्च कर्णवर्गः सः।

7. सौरवर्ष को मानुष्यवर्ष भी कहते हैं। मानुष्य वर्ष को 30 गुणा करने पर पित्र्यवर्ष होता होता है। पित्र्यवर्ष को 12 से गुणा करने पर दिव्यवर्ष होता है। 1000 दिव्यवर्षों को 12 से गुणा कर गुणनफल ग्रह सामान्य युग होता है-

रविवर्षं मानुष्यं तदपि त्रिंशद्गुणं भवति पित्र्यम्।

पित्र्यं द्वादशगुणितं दिव्यं वर्षं समुद्दिष्टम्।।

दिव्यं वर्षसहस्रं ग्रहसामान्यं युगं द्विषड्कगुणकम्।

8. जिस तरह नौका में बैठा हुआ मनुष्य किनारे की स्थिर वस्तुओं को दूसरी दिशा की ओर चलते हुए देखता है, उसी तरह मनुष्यों को सूर्यादि नक्षत्र जो स्थिर हैं, लङ्कादि रेखा देश में पश्चिम की ओर चलते हुए दीखते हैं और पृथिवी स्थिर प्रतीत होती है, परन्तु वास्तव में भूमि ही चलती है-

अनुलोमगतिर्नौस्थः पश्यत्यचलं विलोमगं यद्वत्।

अचलानि भानि तद्वत् समपश्चिमगानि लङ्कायाम्।।

आर्यभट वस्तुतः विलक्षण प्रतिभा के वैज्ञानिक थे। इन्होंने सभी पूर्ववर्ती आचार्यों के सिद्धान्तों का अवलोकन अवश्य किया होगा किन्तु अपने सिद्धान्तों को वेध और गणितीय परिष्कारों के आधार पर ही

स्थापित किया है। यही कारण है कि भारतीय दैवज्ञों और वैज्ञानिकों में आर्यभट का स्थान सर्वोपरि है। आधुनिक वैज्ञानिकों ने भी आर्यभट के वैदुष्य और अद्भुत प्रतिभा को सम्मानपूर्वक स्वीकार किया है।

E-Learning material prepared by Dr. Dhananjay Vas